फैसिज्म की आत्मा

लेखक

टी० एन० कुचुन्नी विमल कैरलीय

प्रकाशक

साहित्य-सेवक-संघ

छपरा

प्रथम संस्करण १९३९ मूल्य ।=)

प्रकाशक—
अच्युतानन्द सिंह
अध्यक्ष
साहित्य-सेवक-संघ, छपरा

मुद्रक
बजरंगबली 'विशारद'
श्रीसीताराम प्रेस, काशी।

अग्रलेख

गत कुछ ही वर्षों से फासिज्म की स्थापना तथा विकास के कारण सारे संसार का ध्यान इस विचित्र आन्दोलन की ओर आकर्षित हुआ है। सभी इसके राजनीतिक सिद्धान्त को ढूँढते हैं, इसकी दार्शनिक नींव को जानना चाहते हैं। यह तो स्पष्ट है कि आधुनिक समाजवाद मार्क्स तथा एन्जेल के आर्थिक तथा दार्शनिक सिद्धान्तों पर अवलम्बित है। लेकिन फासिज्म का कोई निजी दार्शनिक या आर्थिक सिद्धान्त नहीं है। वास्तव में राष्ट्रवाद (सामूहिकवाद = Totalitarian) या Corporate State आर्थिक पूँजी का नग्न शासन है जिसने अपने प्रजातन्त्रात्मक आवरण को दूर हटा दिया है।

दार्शनिक तत्वों की स्वीकृति के लिये फासिज्म को नीत्से को ग्रहण करना, और ओसवाल्ड स्पेंगलर को लोक-प्रिय बनाना पड़ा है। यह बात स्वयं महत्वपूर्ण है। दार्शनिक संसार में उपर्युक्त नामों का कोई स्थान नहीं है नीत्से के मनुष्योत्तर सिद्धान्त में (Supper human Theory) तर्क की अपेक्षा कवित्व अधिक है। स्पेंगलर का नैराश्यवाद पूँजिपतियों के संसार पर आनेवाले दुर्भाग्य को एक झलक और नैतिक तथा भौतिक दिवालियापन की कटु स्वीकृति है। नाजियों का जाति-

सिद्धान्त भी वैज्ञानिक आधार रहित है। मानव-विज्ञानवेत्ताओं ने कभी इसे महत्त्वशाली वैज्ञानिक विषय नहीं समझा। हिटलर की 'My Struggle' (मेरा युद्ध) नामक पुस्तक में तथा उसके पीछे के वक्तव्यों में भारत तथा भारतीयों के घृणित उल्लेख से यह स्पष्ट है कि वह एक अनभिज्ञ उग्रवक्ता (demagogue) है जिसे जर्मनी के पूँजीवादी अपनी स्वार्थ-सिद्धि के काम में लाते हैं!

अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में फासिज्म युद्ध की नीति को वर्तता है और मानव-जीवन तथा सम्पत्ति को अभूतपूर्व परिमाण में विनष्ट करना चाहता है। हमने इसकी बर्बरता अबिसीनिया में देखी है स्पेन और चीन में इसके अमानुषिक व्यवहार को देख रहे हैं। लेकिन इसमें सन्देह की गुंजाइश नहीं कि अन्त में प्रजातन्त्र और स्वाधीनता ही की विजय होगी; और संसार में ऐसी कोई भी ताकत नहीं जो मानवता को एक ऐसी उच्चतर सामाजिक व्यवस्था की ओर अग्रसर होने से रोके जिसमें मनुष्य द्वारा मनुष्य का गला न घोंटा जाय। ऐसी अवस्था तक पहुँचने से पहले संसार की दलित जातियों को भीषण विपत्तियों का सामना करना पड़ेगा तथा बड़े त्याग करने होंगे। अपने सर्वसामान्य शत्रुओं का समान रूप से सामना कर फासिज्म तथा साम्राज्यवाद द्वारा उत्पीड़ित मनुष्यों एवं साम्राज्यवादी देशों के जनसाधारण तथा भारत जैसे परतन्त्र देशवासियों की एक राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय एकता स्थापित करनी पड़ेगी।

चीन और स्पेन में फासिज्म के ऊपर प्रहार करना भारत में साम्राज्यवाद पर कुठाराघात करना है। इसी तरह हमारे देश में साम्राज्यवाद की पराजय से भारत के बाहर रहनेवाले हमारे सहयोगियों की शक्ति बढ़ेगी।

मैं साम्राज्यवाद के समस्त विरोधियों के सम्मुख इस पुस्तक को इसलिये प्रस्तुत करता हूँ कि वे हमारे सर्वसामान्य शत्रु फासिज्म के विषय में अधिक गंभीर रूप से जान सकें। स्टैलिन (Stalin) ने कहा है—यदि क्रान्तिवादी सिद्धान्तपथ को आलोकित न करे तो व्यवहार अंधकार में रहता है।

जब तक कि हम फैसिज्म की प्रकृति का ज्ञान भलीभाँति न कर लें तब तक अंतराष्ट्रीय आधार पर साम्राज्यवादियों एवं फासिस्टों के विरोध में लड़नेवालों की एकता को भी नहीं समझ सकते। प्रस्तुत पुस्तक हमें इसके समझने में सहायता देगी।

सज्जाद ज़हीर

विषय

फैसिज्म



पहला अध्याय

विश्व-क्रान्ति के इस युग में हमें इन बातों पर विचार करने की आवश्यकता है कि, यह संसार किधर जा रहा है। इस मानव-समाज में क्यों इतना हा-हा-कार मचा हुआ है ? और जनता में क्यों इतनी भयंकर दरिद्रता और बेकारी फैली हुई है ? यह तो सबको मानना ही पड़ेगा कि, हजारों वर्षों से समाज के कुछ वर्ग दबे, दलित, शोषित तथा जीवन के सभी तरह के सुखों से वंचित रहते आये हैं और दूसरे वर्ग प्रतापी ज्ञानी एवं सभी भौतिक सुखों के अधिकारी बन बैठे हैं। मानव-समाज के इस विभेद की बात मनुष्य के पूर्व जन्म-कर्म का फल कहकर अथवा ईश्वर की लीला मानकर छोड़ दी गयी है। इस विभेद को पूर्व जन्म-कर्म का परिणाम या ईश्वर की मर्जी मानना कहाँ तक मिथ्या तथा अज्ञतापूर्ण है—यह समाज-विज्ञान-वेत्ता या मानव-समाज की थोड़ी बहुत बातों का जिनको अनुभव है, वे बता सकते हैं। किसी अशिक्षित और विचार-शून्य आदमी के लिये इस बात का विश्वास करना सम्भव है। मगर शिक्षित और विचारशील व्यक्ति इस बात को नहीं मान सकता। ईश्वरवादी

लोग इस बात को भगवान के सिर पर मढ़कर छुट्टी पाते हैं अथवा ऊँच-नीच के इस भेद को कर्म-फल कहकर उस प्रसंग को समाप्त करना चाहते हैं; क्योंकि वे उसमें छिपे हुए रहस्यों को खोलना नहीं चाहते। ऐसा करें तो ईश्वरवाद की आड़ में होने वाली अनीतियों की बातें खुल जायँगी अथवा ईश्वर, स्वर्ग और पुण्य के नाम पर होनेवाले उनके कर्म ढोंग साबित होंगे। यदि समाज में केवल थोड़े से व्यक्ति ही भूखे और बेकार रहते तो हमें यह बात छेड़ने की इतनी जरूरत न पड़ती लेकिन हम देखते हैं, आजकल थोड़े से लोगों को छोड़कर बाकी सारी जनता बेकार है—भूखी है और जीवन की उन्नति से बिलकुल वंचित है। इस बात को ईश्वरेच्छा अथवा पूर्वजन्म का कर्म-फल मानें तो मूर्खता की हद ही हो जाती है।

जब हम मानव-समाज का निरीक्षण करते हैं, तब हमें यह निष्पक्ष भाव से मानना पड़ता है कि समाज की सारी विषमताएँ मनुष्य की स्वार्थान्धता से होनेवाली करतूतों का ही फल है। जो लोग विज्ञान को झूठा बताने के लिये तैयार होंगे, उनके आगे हमें अपना तर्क रखने की जरूरत नहीं। हमें सब बातें विज्ञान की दृष्टि से देखनी चाहिये। मानव-समाज की स्थिति-गति को समझने के लिये और उसकी आलोचना करने के लिये हमको समाज-विज्ञान का ही सहारा लेना पड़ेगा।

इस मानव-समष्टि को अर्थात् मनुष्यों के इस समूह को हम "समाज" नहीं कह सकते; क्योंकि 'समं अजन्ति जनः अस्मिन

इति' यही समाज की परिभाषा है अर्थात् समाज मनुष्यों के उस समूह को कहते हैं; जिसके अंग एक सी स्थिति, गति, विचार तथा प्रवृत्तिवाले हों। लेकिन मानव-समाज का संगठन इस परिभाषा के अनुसार नहीं हुआ है ; क्योंकि हम जानते ही हैं कि अति प्राचीन (अर्थात् समाज-संगठन के) काल से ही समाज ऊँच-नीच के भेदों में विभक्त हुआ है। ऊँच-नीच का भेद केवल एक ही बात में नहीं है; बल्कि धन, विद्या तथा खानपान इत्यादि सभी में एक समूह दूसरे समूह से भिन्न है। यह ऊँच-नीच का भेद समाज में उसी दिन आरंभ हुआ, जब कि सभ्यता का निर्माण होना प्रारंभ हुआ था। अथवा यों कह सकते हैं कि यह दशान्तर तभी से शुरू हुआ जबसे मनुष्य ने अपनी स्वार्थ-सिद्धि के लिये एक दूसरे के ऊपर हाथ उठाना सीखा। आजकल यह भेद अपनी सीमा तक पहुँच गया है और उसने भयंकर और विषम स्थिति का रूप धारण कर लिया है क्योंकि हम देखते हैं कि, समाज में मुट्ठी भर लोग अपनी पूँजी या जमीन्दारी की कमाई के बल पर इस लोक में स्वर्गीय जीवन व्यतीत कर रहे हैं और बाकी सब लोग अपनी जीविका चलाने के लिये चिंतित हैं—गरीब हैं—और बेकार हैं। समाज में कुछ ऐसे वर्ग हैं जो दबे हैं—दलित हैं—शोषित हैं और दूसरों की दृष्टि में निकृष्ट हैं। सबसे खेद-जनक बात तो यह है कि, अधिकांश लोग आज कल बेकार तो हैं ही, लेकिन उनको पहनने भर के लिये कपड़ा और खाने भर के लिये भोजन तक भी नहीं मिल रहा है। यह

किसी एक देश की हालत नहीं है; बल्कि सारे संसार में यह भयंकर वैषम्य उपस्थित हुआ है।

हम ऊपर कह चुके हैं कि, समाज-संगठन के समय से ही यह विषमता वर्ग-भेद के रूप में उत्पन्न हुई है। अब यह प्रश्न उठता है कि, इसका कारण क्या हो सकता है ? समाज-विज्ञान हमें यह बताता है कि पहले मानव-जीवन एक ऐसी दशा में था जब इस तरह की कोई विषमता पैदा नहीं हुई थी। वह मानव जीवन की प्रारंभिक दशा थी, जब कि सब लोगों को पेट भर भोजन मिलता था और आपस में किसी भी तरह का झगड़ा या वैमनस्य पैदा नहीं हुआ था अर्थात् सब लोग अपने ऐक्य-बल से जीवन व्यतीत कर रहे थे। उस समय जन-संख्या बहुत कम थी और प्रकृति के अनन्त क्षण में सबको आवश्यकता से अधिक खाद्य-पदार्थ मिलता था और खाने भर तक ही मानव जीवन सीमित था।

इसके बाद एक ऐसा समय आ गया जब कि जन-संख्या पहले से कई गुनी बढ़ गयी और मनुष्य को खाद्य-पदार्थ प्राप्त करने के लिये शारीरिक परिश्रम करना पड़ा। खेती करने लायक सभी भूमि व्यक्तिगत अधिकार में आ गयी। खेती ही उस समय मनुष्य के जीविकोपार्जन का एक मात्र आधार थी। जो लोग या वर्ग कम ताकतवाले थे उनपर अधिक ताकतवालों ने अत्याचार करके उनका पैदा किया हुआ पदार्थ और उनकी भूमि हड़प ली तथा उनको अपना गुलाम बना रखा। इस प्रकार सारा

मानव-समूह दो श्रेणियों में विभक्त हुआ—एक शासक या सबल और दूसरा शासित या निर्बल। शासक-वर्ग शासित या गुलामों के शारीरिक परिश्रम के बल पर ही जीवन व्यतीत करने लगे। इस कारण शासित-वर्ग को कठिन परिश्रम करने पर भी अपनी उदर-ज्वाला शान्त करने के लिये तरसना पड़ता था।

आधुनिक मानव-समाज इस प्रारम्भिक दशा का एक विकसित और परिवर्तित रूप-भाग है। आधुनिक समाज को भी हम दो वर्गों में विभक्त कर सकते हैं। शासक या शोषक-वर्ग जिसमें जमींदार पूँजीपति धर्म के ठेकेदार पुरोहित और सरकार सम्मिलित है और दूसरा शासित या शोषित-वर्ग जिसमें बाकी सारी जनता सम्मिलित है। शासक वर्ग जनता के शोषण से ही अपने को मोटा बना रहे हैं। जनता के शारीरिक परिश्रम का सारा फल इन्हीं शोसकों या शासकों के पास चला जाता है। सरकारी कानून ही इनका हथियार है सरकार तथा बाकी शोषकों का स्वार्थ अन्योन्याश्रित है क्योंकि सरकार उन्हीं शोषकों के पैर पर खड़ी है और सरकार ने ही इन शोषकों को अपनी स्वार्थ-सिद्धि के लिये बना रखा है। आज की इस भयंकर गरीबी का मुख्य कारण यही है कि सारी संपत्ति इन शोषकों के हाथ में केन्द्रीभूत हो गयी है। आजकल जब कि शोषण अपनी सीमा तक पहुँच गया है, जनता को बेकारी के रोग से ग्रस्त होना पड़ा है।

दूसरा अध्याय

समाज की प्रगति और फैसिज्म

जंगली अवस्था

हम पहले अध्याय में बता चुके हैं कि, समाज-संगठन के साथ-ही-साथ समाज में दो श्रेणियाँ पैदा हुईं। शोसक या शासक और दूसरा शोसित या शासित। इन दो श्रेणियों की उत्पत्ति के पहले मानव-जीवन में किसी भी तरह की विषमता नहीं थी। उस समय कोई किसी के अधीन न था या कोई किसी का गुलाम या शासक नहीं था। मनुष्य-जीवन की इस दशा को जंगली अवस्था (Barbarious Stage) कहते हैं। समाज-संगठन इसी दशा के अनंतर हुआ है।

विकासवाद या डार्विन के सिद्धान्तानुसार मनुष्य वानर के ही विकास का फल है। पहले पहल मनुष्य शिकार के द्वारा जीवन व्यतीत करता था। उस समय मनुष्य जीवन और मृगीय-जीवन में बड़ी समता थी। इसी शिकारी-जीवन से धीरे-धीरे पारिवारिक जीवन की भी उत्पत्ति हुई। पारिवारिक जीवन की उत्पत्ति के बाद भी मनुष्य शिकार करके ही खाता था। काल-क्रम से मनुष्य ने खेती करना सीखा। उस समय भूमि आजकल के समान व्यक्तिगत अधिकार में नहीं थी। अपने परिवार की जरूरत भर के लिये लोग थोड़ी जगह पर अनाज पैदा करते थे।

उस समय लोग यह खेती अलग अलग नहीं करते थे। कई लोग मिलकर एक जगह खेती करते थे और फसल होने पर अपनी जरूरत भर के लिए आपस में अनाज बाँट लेते थे। यह दशा सभ्यता की उत्पत्ति के पहले की है। इस कारण उस समय मानव-जीवन की कोई समस्या नहीं पैदा हुई थी।

गुलामी प्रथा

कालक्रम से मानव जीवन की यह दशा भी चली गयी। जब जन-संख्या की कई गुनी वृद्धि हो गयी तब खेती करने लायक भूमि पर व्यक्तिगत अधिकार स्थापित हो गया। यह व्यक्तिगत अधिकार स्थापित करने के लिये एक वर्ग या समूह दूसरे से लड़ने लगा। एक वर्ग या समूह जिनके पास भूमि नहीं थी दूसरे भूमि-अधिकारियों से लड़ने लगे। अधिक ताकतवाले वर्गों ने कमजोर वर्गों से लड़कर उनके कब्जे की भूमि को हड़प लिया और उनमें अपना प्रभुत्व स्थापित किया। इस प्रकार सारी भूमि अधिक ताकतवाले वर्गों के हाथ आ गयी। जो कमजोर वर्ग लड़ाई में परास्त हुए उनको सबल वर्ग ने अपना गुलाम बना रखा। खेतों में काम करने के लिये इस प्रकार के गुलामों को नियुक्त किया। जिन स्वामियों के पास गुलामों की संख्या कम थी या उनका अभाव ही था वे अपने द्रव्य के बल पर गुलामों को मोल लेते थे। इस प्रकार उस समय गुलामों का क्रय-विक्रय भी हो रहा था। मानव जीवन की इस दशा को "गुलामी अवस्था" (Slavery Stage) कहते हैं।

स्वामी वर्ग अपने गुलामों से थोड़ी सी मजदूरी पर दिन भर काम कराते थे और उनके परिश्रम का पूरा लाभ उठाते थे।

उन श्रमजीवी गुलामों को थोड़ी सी मजदूरी या भोजन से ही सन्तुष्ट होना पड़ता था।

सामन्तशाही

कई शताब्दियों के बाद मानवजीवन की एक ऐसी दशा आ गयी जब कि इन गुलामों का लोप हो गया ❀। उस समय भूमि साधारण जनता के हाथ में आ गयी। लेकिन संपत्ति जनता के हाथ भी अधिक दिन नहीं रही, क्योंकि कुछ शक्तिशाली व्यक्तियों ने सारी सम्पत्ति को उस बलहीन जनता से हड़प कर अपने कब्जे में रख लिया। गुलाम वर्गों के लोप हो जाने के कारण उन स्वामियों ने अपनी भूमि को खेती के लिये पराजित वर्गों के हाथ दे दिया। इस प्रकार एक दूसरे कृषक वर्ग की भी उत्पत्ति हुई। यही कृषक वर्ग पहले भूमि के असली अधिकारी थे। इस समय खेती करने के लायक सभी भूमि कुछ शक्तिशाली व्यक्तियों अथवा वर्गों के हाथ में बँट गयी। इन लोगों में जो सबसे बल-

---

❀ भारत के दक्षिणवर्ती केरल प्रदेश में अब भी गुलाम जाति की संतान 'चेरुन्मकल' नामक एक काली जाति रहती है। वह अब भी केरल के बड़े बड़े जमींदारों के गुलाम हैं। एक साधारण जमींदार कम से कम पचीस तीस गुलाम का एक समूह रखता है। उनका काम दिन भर खेतों में काम करना है और शाम को खाने के लिये दो सेर अनाज मजदूरी के रूप में उनको दिया जाता है।

ज्ञान था। वह उनका राजा बन बैठा। मानव-समाज का संगठन करीब इसी समय हुआ है। सारे समाज का अधिकारी राजा था। राजा की अधीनता में भूमि का अधिकारी वर्ग था जिनमें प्रत्येक सामन्त कहा जाता था। कृषक तथा अन्य पेशावाले साधारण लोग इन सामन्तों के अधीन थे। इस प्रकार मानव-समाज के संगठन के साथ ही समाज दो श्रेणियों में विभक्त हुआ, एक सामन्त तथा राज-वर्ग जिनको शासक कहते हैं और दूसरा साधारण जनता जिसको शासित वर्ग कहते हैं। समाज की इस दशा को सामन्तशाही अवस्था (Fuedal stage) कहते हैं।

समाज-संगठन और सभ्यता

हम पहले कह चुके हैं कि सामन्तशाही शासन के समय ही समाज का संगठन हुआ है। यह संगठन शासक वर्ग ने किया। यहाँ एक बात कह देना उचित होगा कि राजा का सारा बल सामन्तों के हाथ में था। उन दोनों वर्गों का कार्य और स्वार्थ एक ही था। दोनों का स्वार्थ परस्पर की मर्जी और सहायता से ही चल सकता था। जब एक राजा को दूसरे राजा से लड़ना पड़ता था, तब सामंत लोग ही अपनी सेनाओं से उसकी सहायता करते थे। इन शासक वर्गों ने समाज का संगठन इसलिये किया कि साधारण जनता में राजा तथा सामंतों के विरुद्ध विद्रोह का भाव न पैदा हो। इन शासकों का शासन अन्यायपूर्ण शासन-पद्धति के आधार पर ही स्थित था और दूसरी बात यह थी कि सर्व साधारण के परिश्रम के फल को

चूसनेवाले शासक वर्ग केवल अपने स्वार्थ की रक्षा करना चाहते थे। कृषक, मजदूर तथा अन्य पेशा करनेवाली साधारण जनता को कठिन परिश्रम करने पर भी अपने पेट भरने के लिये कठिनाई पड़ती थी। शासक वर्ग ने अपनी प्रभुता को कायम रखने और अपने अन्यायों को छिपाने के लिये समाज-संगठन के साथ ही धर्म, सभ्यता, आचार, व्यवहार, नीति, न्याय इत्यादि की सृष्टि की। जिनकी उत्पत्ति पहले नहीं हुई थी। सभ्यता, शासन, नियम आदि की सृष्टि शासक-वर्ग ने अपने अन्यायों का समर्थन कराने के लिये किया था। शोषित जनता शासकों के द्वारा सब तरह से दबायी जाती थी और वह दलित थी। शासकों ने उसको असभ्य और अस्पृश्य बताकर विद्या, ज्ञान और बुद्धि-विकास से वंचित रखा। इस कारण भोली भाली जनता अपने ऊपर होने वाले जुल्मों को पहचान नहीं सकी और सभी ने अपनी शोचनीय दशा को भाग्य का दोष समझ लिया।

आधुनिक समाज जिस सभ्यता, संस्कृति, आचार, व्यवहार और नीति-न्याय के आधार पर चल रहा है, वह इन्हीं प्रारंभिक सभ्यतादि का विकसित रूप भाग है। शोषक और शासक वर्ग के अन्यायपूर्ण प्रभुत्व को स्थायी रखने के लिये रची गयी इस सभ्यता को असभ्यता, आचार व्यवहार को अनाचार, संस्कृति को कुसंस्कृति, राज नियम तथा नीति-न्याय को अनीति ही हम कह सकते हैं। जबसे समाज का संगठन हुआ, तब से अभी तक शासक वर्ग या शोषक वर्ग समाज के ऊपर इन्हीं के बल से

शासन कर रहे हैं।

*धर्म (Religion)

इस सामंतशाही शासन की अवस्था में धर्म (Religion) भी समाज का एक प्रधान अंग बन गया। धर्म के संचालक, ईश्वर के किंकर, अथवा स्वर्ग और पुण्य के ठेकेदार पुरोहित वर्ग, राज-वर्ग और सामंतों के ही हाथ में थे। ये तीनों वर्ग साधारण जनता की कमाई को चूसकर अपना प्रभुत्व दिखा रहे थे। राजा लोग तथा सामंत वर्ग राजकीय नियम तथा नीति के बल पर जनता का रक्त चूस लेते थे और अपने स्वार्थ के लिये उसको दबाते थे तथा पुरोहित वर्ग ईश्वर-स्वर्ग, नरक, पुण्य इत्यादि के नाम पर अपनी स्वार्थपूर्ति अर्थात् अपने को मोटा रखने के लिये जनता का शोषण कर रहे थे। सारे शास्त्रों का निर्माता और शिक्षा का संचालक यही शासकवर्ग–खासकर पुरोहितवर्ग–था। इस वर्ग ने जो कुछ शास्त्र रचा, जिस सभ्यता का निर्माण किया वह केवल अपनी प्रभुता को कायम रखने के लिये ही था।

६ पूँजीवाद (Copitalism)

सामन्त-शासन-काल के बाद आधुनिक पूँजीपति शासन दुनिया में कायम हुआ। इस पूँजीपति शासन को अवस्था का आरम्भ करीब १८ वीं सदी से होता है। पूँजीपति शासन का

* पूँजीवादी जमाने तक।

आरम्भ दुनिया में उन देशों में पहले पहल हुआ जहाँ मशीनों का आविष्कार हुआ और उसकी उन्नति से कल-कारखाने स्थापित हुए। इंग्लैंड, जर्मनी तथा जापान इत्यादि देश इस काम में सबसे पहले आगे बढ़े। इस सम्बन्ध में एक बात जान रखना अत्यंत आवश्यक है। वह यह कि संसार के देशों को हम दो भागों में विभक्त कर सकते हैं। एक कृषि-प्रधान देश जहाँ केवल कच्चे माल पैदा होते हैं और दूसरा उद्योग-प्रधान (Industrial Cuntry)। इटली, भारत, चीन रूस जैसे देश कृषि प्रधान हैं और जापान इंग्लैंड, जर्मनी जैसे राष्ट्र उद्योग-धन्धा-प्रधान हैं। इन्हीं उद्योग-धन्धा-प्रधान देशों में मशीनों के आविष्कार तथा उसकी प्रगति से कल-कारखाने स्थापित हुए। इन देशों में कालक्रम से असंख्य यंत्रशालाएँ स्थापित हो गयीं। जितना सामान कई दिनों में असंख्य मनुष्यों के शारीरिक परिश्रम से बनता था उतना अब कारखानों में एक ही दिन में एकाध व्यक्ति की सहायता से बनने लगा। इस कारण उन देशों की जरूरत से कई गुना ज्यादा चीजें कल-कारखानों में बनने लगीं। एक ओर सामान मशीनों द्वारा प्रचुर रूप में तैयार होने लगा और दूसरी ओर करोड़ों मजदूर तथा पेशावाले वर्ग जो पहले अपने हाथ से सामान बनाकर या काम करके जीविका चलाते थे बेकार हो गये। पूँजीपति लोग अन्य कृषि-प्रधान अर्थात् उद्योग-धन्धा में पिछड़े देशों में अपना सामान

बेंचकर ढेर का ढेर धन उन देशों से ले जाने लगे।

कल-कारखानों को स्थापित करने के लिये बड़ी पूँजी की आवश्यकता है। इस कारण कल-कारखानों का स्थापन उन्हीं बाबुओं ने किया, जिन्होंने जनता को चूसकर अमित धन अपने पास इकट्ठा किया था। पूँजीपति में शोषक वर्ग हम केवल कल-कारखानों के मालिकों को ही नहीं सम्मिलित कर सकते; बल्कि बड़े-बड़े व्यापारी, महाजन इत्यादि लोग भी बड़ी संख्या में समाज का शोषण करनेवाले हैं। धर्म के ठेकेदार पुरोहित वर्ग भी अब इस वर्ग के अंग हैं। इनके अतिरिक्त एक दूसरा वर्ग भी अपने सरकारी कानून के बल पर श्रम-जीवियों का (किसानों का) शोषण पहले से ही कर रहा है; वह है जमींदार। आजकल के गुलाम देशों में जमीन्दारों की सृष्टि सरकार ने की थी; क्योंकि जमीन्दार वर्ग रूपी पैर पर ही सरकार खड़ी रहती है। इन दोनों का स्वार्थ पूँजीपतियों की तरह जनता का शोषण करता है।

उपनिवेश

पूँजीपति लोग जो माल अपनी पूँजी के बल से पैदा करते हैं, उसको बेचने के लिये उनको उपनिवेश ढूँढ़ना पड़ा क्योंकि वे अपना माल, उन्हीं देशों में बेचना चाहते हैं, जहाँ से उनको काफी मुनाफा मिलता है। अपने देश में उनको अधिक मुनाफा नहीं मिल सकता, क्योंकि कारखानों की अधिक स्थापना से

वहाँ की जनता में अधिकांश बेकार हो जाते हैं। समाज की सम्पत्ति शोषकों के हाथ केन्द्रीभूत हो जाने के कारण जनता की गरीबी बढ़ जाती है और लोगों की क्रय-शक्ति (Purchasing power) बहुत कम हो जाती है। अतः पूँजीपतियों ने भारत जैसे कृषि-प्रधान देशों में (जो उद्योग-धन्धा तथा राजनीति में पिछड़े हुए हैं) जाकर अपनी व्यापारिक संस्था खोल ली। वहाँ अपना माल बेचकर वे लोग काफी मुनाफा उठा रहे हैं। उन कृषि-प्रधान देशों में कच्चे माल को सस्ते दाम में खरीद कर अपने यहाँ ले जाते हैं और पक्के माल के रूप में उसको फिर वहीं लाकर बेच डालते हैं, जिससे जनता का धन काफी मात्रा में उनके पास पहुँच जाता है। पूँजीपतियों की इस विक्रय नीति के कारण उन कृषि-प्रधान उपनिवेशों में बेकारी और गरीबी भयंकर रूप में फैली हुई है।

आजकल सभी देशों में किसी न किसी रूप में पूँजीवादी शासन कायम हुआ है। रूस को छोड़कर बाकी सभी देशों के समाज में पहले बताई गयी दो श्रेणियाँ अर्थात् शासक या शोषक और दूसरा शाषित या शोषित पायी जाती हैं। शोषक-वर्ग में जमीन्दार, पूँजीपति और सरकार सम्मिलित है।

आधुनिक संसार के सभी पिछड़े हुए देश इस प्रकार उपनिवेशों के रूप में पूँजीपतियों के हाथ बँट गये। इन पूँजीपतियों ने सब मिलकर साम्राज्यवादी का रूप धारण किया। पूँजीपतियों के उपनिवेश बन गये हैं। इन साम्राज्यों के शासनाधिकार इन्हीं

शोषकों के हाथ में हैं। जब एक ही उपनिवेश में एक से अधिक पूँजीपति सरकार अपना प्रभुत्व जमाना चाहती है, तब उनमें आपस में लड़ाई हो जाती है। गत विश्व महायुद्ध इसी झगड़े का परिणाम है।

पूँजीवाद का दुष्परिणाम

पूँजीवाद का दुष्परिणाम केवल जनता की बेकारी और गरीबी ही नहीं है; बल्कि उससे मानव जाति के ऊपर एक भयंकर विपत्ति उपस्थित होकर संसार की शान्ति भंग हो जाती है। प्रत्येक पूँजीपति राष्ट्र अपने-अपने कारखानों के चलाने की ही कोशिश कर रहे हैं लेकिन तैयार हुए माल की बिक्री जब तक होती रहेगी तभी तक कारखाने चल सकते हैं? १८ वीं सदी के पहले करीब २५ वर्षों तक दुनिया में कई बाजार पड़े हुए थे। परन्तु गत कुछ वर्षों से बात कुछ और हो गयी है। संसार के सभी उपनिवेशों (बाजारों) को पूँजीपति सरकारों ने आपस में बाँट लिया है। एक समय इंग्लैंड दुनिया के अधिकांश बाजारों का मालिक था। फिर जर्मनी ने भी कारखाने स्थापित कर अपने लिये उपनिवेश कायम किये। इसके फलस्वरूप सन १९१४ ईस्वी में लोक महायुद्ध हुआ। उस समय मैदान खाली पाकर अमेरिका जापान ने भी उपनिवेश कायम किये। उनके कारखानों में बहुत अधिक तादाद में माल बन रहा है। इस समय सभी पूँजीपति राष्ट्र एक दूसरी लड़ाई के लिये तैयारी कर रहे हैं; क्योंकि इंग्लैंड, जर्मनी, फ्रांस, इटली तथा जापान इत्यादि

सभी शोषक साम्राज्य एक दूसरे को अपना शत्रु समझ रहे हैं। इन राष्ट्रों का स्वार्थ एक ही है अर्थात् कमजोर मुल्कों को हड़प कर वहाँ के कच्चे माल को सस्ते दाम में मोल लेना और उसको पक्के माल के रूप में परिणत करके महँगे दाम में वहीं बेच डालना ही उनका उद्देश्य है। वे सभ्यता और शान्ति के नाम पर वहाँ की जनता की संपत्ति सब तरह से चूसना चाहते हैं और इस काम में एक दूसरे को अपना विघ्नकारी समझता है। वे यह जानते हुए भी कि, जब तक अपने अपने माल के लिये उपनिवेशों की छीना-झपटी रहेगी तब तक संसार में अशान्ति की विषमता और सभी देशों की जनता में भयंकर दारिद्र्य और बेकारी कायम रहेगी, अपने स्वार्थ को छोड़ना नहीं चाहते। वे अपने मुल्क की जनता से कोई भीतरी सहानुभूति नहीं रखते; क्योंकि वहाँ का शासनाधिकार उन्हीं शोषक वर्ग के हाथ में है। उनका वह प्रभुत्व केवल अपने उपनिवेशों की जनता के शोषण पर ही निर्भर नहीं है; बल्कि इस काम के लिये समाज की संपत्ति को भी चूसना पड़ता है। कहने की आवश्यकता नहीं कि पूँजीवाद ही आधुनिक संसार की सभी लड़ाइयों तथा विषमताओं का एकमात्र कारण है।

इटली की प्रगति

इस समय इंग्लैंड, जर्मनी, जापान इत्यादि पूँजीपति साम्राज्यों का सामना करने के लिये कुछ कृषि-प्रधान अर्थात् उद्योग-धन्धों में पिछड़े हुए देश भी तैयार हो चुके हैं। इनमें प्रमुख इटली है।

कृषिप्रधान देश है तथापि वहाँ कल-कारखानों की उन्नति हो रही है और वह अन्य शोषक साम्राज्यों के समान एक पूँजीपति राष्ट्र बनना चाहता है। इस समय इटली का शासन जनता का शोषण करनेवाले पूँजीपतियों तथा जमींदारों के हाथ में है। इटली भी अब अबीसीनिया जैसे एक कमजोर, उद्योगहीन देश को हड़पकर सभ्यता के बहाने वहाँ की जनता को लूट रहा है।

पूँजीवाद की विषमता

आजकल मशीनों के प्रयोग से करोड़ों आदमियों का बेकार होना और साम्राज्यशाही, पूँजीवादी और जमीन्दारी शोषण से भूखों की संख्या लाखों की तादाद में प्रतिदिन बढ़ जाना एक साधारण सी बात हो गयी है। इसके अतिरिक्त सभी देशों में जन-संख्या बढ़ती ही जा रही है। सिर्फ भारत में सन् १६२१ से १६३१ तक दस वर्षों में ३ करोड़ से अधिक आदमी बढ़ गये हैं।

साम्राज्यवाद

हम पहले बता चुके हैं कि पूँजीवाद और साम्राज्यवाद दोनों अन्योन्याश्रित हैं। पूँजीवाद का विकसित रूप ही साम्राज्यवाद है। यह भी कहा गया है कि, दुनिया के कमजोर मुल्क इटली, जर्मनी, इंग्लैंड, जापान इत्यादि शोषक साम्राज्यवादी राष्ट्रों के हाथ उपनिवेशों के रूप में बँट गये हैं। इन कमजोर मुल्कों की जनता की संपत्ति चूसकर ही ये साम्राज्य मोटे हो रहे हैं और

इसी कारण भयानक बेकारी और गरीबी उन देशों को तबाह कर रही है। साम्राज्यशाही शासन पूँजीपति तथा जमींदार वर्ग के हाथ में है। शोषक की संपत्ति, इन्हीं शोषक जमीन्दारों (सामन्तों) और पूँजीपतियों के हाथ बँट जाती है। शोषक राष्ट्रों की जनता को इस संपत्ति के हिस्से में जरा भी भाग नहीं मिलता। उसकी बेकारी और गरीबी प्रतिदिन ज्यों की त्यों बढ़ती ही जाती है। इंग्लैंड, जर्मनी जैसे शोषक मुल्कों की जनता की हालत भारत जैसे गुलाम और शोषित उपनिवेश की जनता से किसी भी माने में अच्छी नहीं कही जा सकती अर्थात् वहाँ भी घोर दरिद्रता और बेकारी फैली हुई है।

क्रान्ति (Revolution)

पूँजीपति या साम्राज्यशाही शासन की इस विषमता से गत २५ वर्षों से सभी देशों की जनता में बड़ा असंतोष फैल रहा है। कुछ देशों में यह जनता का असंतोष क्रान्ति का रूप धारण कर चुका है और अन्य देशों में भी यह श्रेणी-संघर्ष का रूप धारण कर रहा है। सभी मुल्कों की जनता इस पाशविक शासन को जड़ से उखाड़ कर फेंक देना चाहती है। रूस की जनता ने इस आदर्श को कार्य रूप में परिणत कर संसार के सामने रखा है। रूसी क्रान्ति के बाद संसार के सभी साम्राज्यशाही अर्थात् पूँजी-पति शासक-वर्ग विश्व-क्रान्ति और समाजवाद का नाम सुनकर भयभीत हो गये हैं। वे यह बात समझ गये हैं कि, अब हमारे देश में भी शोषित और शोषक वर्ग में लड़ाई (श्रेणी-संघर्ष)

छिड़ेगी और यह साम्राज्यशाही मिट्टी में मिल जायगी। इसलिये जनता में क्रांति का जो भाव पैदा हो रहा है उसको उन्होंने दबाने की कोशिश की है। वे जनता के ऊपर पूँजीपतियों जमीन्दारों तथा सरकार द्वारा होनेवाले शोषण, और दमन की ओर से उसका ध्यान हटाकर जनता को श्रेणी-संघर्ष से अलग रखना चाहते हैं। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये इन शोषक वर्गों ने अपने राष्ट्र की जनता के सामने एक नया वाद—शासन-पद्धति का एक नया नाम रखा है। 'राष्ट्रीयवाद' इस राष्ट्रीयवाद के अनुसार उनकी जनता की गरीबी केवल अपने देश की शान बढ़ाने से—कमजोर मुल्कों को हड़प कर उन पर शासन करने से ही मिट सकती है। वे असल में शासन और सभ्यता के प्रचार के बहाने उन मुल्कों का शोषण कर केवल अपने को अर्थात् अपने साथी शोषकों को मोटा रखना चाहते हैं। कमजोर मुल्कों को लूटने के लिये एक बड़ी सेना तथा द्रव्य की आवश्यकता है। यदि जनता इस साम्राज्यशाही लड़ाई के विरुद्ध होती, तो वह अपनी मजबूत नौजवान सन्तानों को सेना में भर्ती करके और लड़ाई के खर्च के लिये द्रव्य देकर अपने शासक-वर्ग की सहायता न कर सकती। इसलिये शासक-वर्ग ने जनता को राष्ट्रीयवाद के नाम पर बहकाकर उसको इस भ्रम में डाल रखा है कि, ऐसी लड़ाइयों से ही देश की गरीबी मिट सकती है। जिस दिन शोषक मुल्कों की जनता को अपने साम्राज्यवादियों के इस धोखे का पता चलेगा, उसी दिन उनकी साम्राज्यशाही और शोषण मिट्टी में

मिल जायगा। लेकिन इस समय इंग्लैंड, जर्मनी इटली तथा जापान की जनता धनिकों के इस राष्ट्रीयवाद के जाल में फँसी हुई है और अपने ऊपर सरकार, पूँजीपति तथा जमीन्दारों द्वारा होनेवाले शोषण दमन तथा पाशविक शासन को भूल बैठी है।

फैसिज्म

इस राष्ट्रीयवाद का आविष्कार पहले इटली ने किया जिसकी शासन-पद्धति का नाम है 'फैसिज्म' इटली के बाद अन्य साम्राज्य-शाही शोषकों ने भी इस वाद और शासन की इस पद्धति को अख्तियार किया। शासक या शोषक-वर्ग के इस फासिज्म या राष्ट्रीयवाद का उद्देश्य जनता में विश्वक्रान्ति और श्रेणी-संघर्ष-विरोधी भाव पैदा कर उसको साम्राज्यशाही लड़ाई के लिये प्रेरित करना और उसका सांपत्तिक लाभ अपने लिये उठाना है। देश की शान के नाम पर लड़ी जानेवाली ऐसी लड़ाइयों से गुलाम मुल्क तबाह हो जाते हैं। वहाँ का धन और शासनाधिकार शोषक साम्राज्यवादियों के हाथ आ जाता है। इंग्लैंड, जर्मनी, इटली और जापान इत्यादि फैसिस्ट (जहाँ फैसिज्म या राष्ट्रीयवाद की नीति के आधार पर शासन हो रहा है) देशों की जनता, जिसकी नौजवान सन्तानों के बल से, जिसकी कौड़ी की ताकत से यह लड़ाई लड़ी जाती है, साम्राज्यवादी शासन के किसी भी फायदे का भागी नहीं हो सकती।

अभी तक जो कुछ कहा गया है, उससे यह बात स्पष्ट हुई होगी कि पूँजीवाद का विकसित रूप ही साम्राज्यवाद है और उसीका एक नया रूप फैसिज्म है। अगले अध्याय में यह बताया जायगा कि, इटली में यह फैसिस्ट शासन कैसे स्थापित हुआ और उसका ढंग क्या है।

तीसरा अध्याय

इटली में फैसिज्म का जन्म

इटली में राजनीतिक आन्दोलन

फैसिज्म फासियो (Fascio) शब्द से निकला है, जो इटली के राष्ट्रीयवादी लोगों के संघ का नाम है। ऐसे लोगों का संगठन सन् १९१४ में पहले पहल इटली में बैनिटो मुसोलिनी (Benito Musolini) ने किया था। उस समय इटली में कई राजनीतिक संघ स्थापित हो चुके थे। उन संघों का आन्दोलन देश में प्रबल रूप में चल रहा था। उनमें मुख्यतः दो संघ थे—१ सुधारवादी और २ क्रान्तिकारी। इनमें यद्यपि सुधारवादी दल का ही पहले बहुमत था तथापि जब बिसोलटी क्रान्तिकारी दल के नेता बने, तब से सुधारवादी संघ की जनप्रियता घटने लगी। सुधारवादी दल के सामने सामाजिक प्रथाओं तथा व्यवस्थाओं का ही प्रश्न था, पर क्रान्तिकारी दल के सामने अमीरी, गरीबी का सवाल था। बिसोलटी (Bissolati) ने इस संघ को समाजवादी दल का रूप दिया। वह केवल समाज के आर्थिक सवालों को ही हल करना नहीं चाहता था; बल्कि वह अन्तराष्ट्रीय सवालों से सम्बन्ध रखता था।

इटली एक कृषि-प्रधान देश है। वहाँ की सारी भूसम्पत्ति

जमींदारों के हाथ बँट गयी है। उनका प्रभुत्व किसानों के कठोर शोषण के बल पर बढ़ रहा था। क्रान्तिकारी दल इस सामाजिक विषमता का खात्मा करके समाजवादी राज्य कायम करना चाहता था। क्रान्तिकारियों ने समाज-संगठन के इस आदर्श को रूसी क्रान्ति से सीख लिया था। वह सर्वथा रूसी क्रान्ति का ही पथ ग्रहण करना चाहता था। किन्तु स्मरण रखना चाहिये कि, इस दल का मत-प्रचार केवल शिक्षित और मध्यम श्रेणी (Middle class) तक ही उस समय सीमित था। क्योंकि, वह उसका आरंभिक काल था जनता के संगठन का सवाल उस समय नहीं उठा था और वर्ग बोध भी उस समय जनता में नहीं होने लगा था।

उच्च श्रेणी के अर्थात् जनता का खून चूसकर जीनेवाले लोग या वर्ग समाजवादियों का मत-प्रचार देखकर डर गये। उन्होंने समाजवादी दल के खिलाफ एक तीसरी पार्टी कायम की। इटली के शासन का सारा अधिकार धनिक-वर्ग खासकर सामन्तों (जमींदारों) के हाथ है। उनका एक मात्र उद्देश्य शोषण की प्रवृत्ति और दमन की नीति से अपना प्रभुत्व कायम रखना ही है। इटली में उस समय तक किसानों की ही संख्या अधिक होने के कारण वे ही इस शोषण का शिकार बनते थे। वहाँ का शोषक धनिक वर्ग केवल अपने ही भाइयों की गर्दन घोंटकर अपने ही आलसी और विलासी जीवन को मजबूत बनाना नहीं चाहता था; बल्कि अन्य कमजोर देशों को भी लूटकर अपने को मोटा

बनाना चाहता था। अपने देश के भाइयों का शोषण, दमन और दलन करने के लिये केवल सरकारी कानूनों का हथियार ही पर्याप्त है। लेकिन दूसरे मुल्कों को हड़प कर उनकी संपत्ति को चूसने के लिये सरकारी कानूनों से काम नहीं चल सकता। उसके लिये भयंकर लड़ाई की आवश्यकता है। इटली का शासक अर्थात् धनिक-वर्ग भली भाँति जानता था कि, ऐसी लड़ाई अपार संपत्ति और कई करोड़ आदमियों का खून पानी की तरह बहाये बिना नहीं लड़ी जा सकती। उसके लिये करोड़ों की संख्या में सैनिकों का संपादन बहुत आवश्यक था। इटैलियन जनता में अधिकांश लोग मेहनत मजदूरी करनेवाले—खासकर किसान—हैं। जनता के रक्त-शोषण से जीनेवाले धनिक या शासक-वर्ग ऐसी लड़ाइयों में अपना खून नहीं बहाना चाहते। वे केवल लूट का माल खाना चाहते हैं। उन्होंने सैनिकों के बहाये हुए खून से अपना महल रँगना ही सीखा है। लड़ाई में जो असंख्य धन खर्च होता है वह गरीब जनता से ही वसूल किया जाता है।

फैसिस्ट पार्टी

लेकिन देश की स्थिति इसके प्रतिकूल होनेवाली थी। सन् १९१३ में शासक लोगों ने देखा कि समाजवादी दल जोर पकड़ रहा है। उन्होंने यह समझ लिया कि, यदि चार-पाँच वर्ष तक और समाजवादी दल का मत-प्रचार जारी रहा तो संभव है कि जनता में वर्ग-बोध पैदा हो और वह संगठित होकर अपने हक के लिये लड़ने लगे। इसलिये वे यह जान गये कि, यदि हमें

अपना शोषण कायम रखना है—अपने स्वार्थों को आगे भी पूरा करना है तो हमें एक दूसरे दल की स्थापना करनी पड़ेगी, जो जनता के ध्यान को आकर्षित करे और जनप्रियता प्राप्त कर समाजवादी या क्रान्तिकारी दल का अन्त कर सके। धनिकों के इसी उद्देश्य के फलस्वरूप सन् १६१४ में इटली में राष्ट्रीयवादी दल या फासिस्ट संघ स्थापित हुआ। देश के लिये लड़ मरना फासिज्म का मुख्य सिद्धान्त है। इस दल का नेता बेनिटो मुसोलिनी बना। वह धनिकों का एक कठपुतली मात्र था। फासिस्ट वाले अपना मत-प्रचार शिक्षित-वर्ग के बीच में नहीं करते थे; बल्कि देश के कोने कोने में बड़ी धूमधाम से सभाएँ कराते थे और किसानों तथा श्रमजीवी गरीब जनता के बीच जोरों से फासिज्म (राष्ट्रीयवाद) का प्रचार किया जाने लगा। इटली की जनता इनकी ओर बड़ी जल्दी आकर्षित हो गयी और झूठी देशभक्ति का नाम सुनकर वह बहक गयी। उनके सामने यही बातें रखी जाती थीं कि, तुम अन्य कमजोर और असभ्य मुल्कों पर विजय पाकर अपने देश की शान बढ़ाओ, वीर पूर्वजों का मान कायम रखो तथा उनके देशों की सम्पत्ति पाकर अपने देश की गरीबी को दूर करो। फासिस्टों ने उस समय इटैलियन जनता के देशाभिमान को जगा दिया। उनमें अपनी प्रतिभा के लिये मर मिटने के लिये प्रेरित करनेवाली राष्ट्रीय भावना या देशभक्ति का भाव पैदा किया और सारी जनता उनके बताये हुए मार्ग पर चलने के लिये तैयार हो गयी। फासिस्टों ने थोड़े वर्षों

में सारी इटली को एक ऐसी राजनीतिक दशा पर पहुँचा दिया, जब कि सारा देश राष्ट्रीय भावना से ओतप्रोत हो गया।

सन् १६१५ में फासिस्ट संघ के लोगों की संख्या करीब तीन हजार ही थी; लेकिन चार-पाँच वर्षों में लोग करोड़ों की तादाद में उसके मेंबर बन गये। इन्हीं लोगों के संघ का नाम 'फासियो' है, जिससे फासिज्म शब्द बना।

लोक महायुद्ध से सबक

सन् १६१४ अर्थात् लोक महायुद्ध की समाप्ति के बाद इटली के (धनी) शासक-वर्ग के कायम किये गये फासिस्ट दल ने देखा कि, इंग्लैंड और जर्मनी ने दुनिया के कमजोर मुल्कों को कब्जे में रखकर अपनी शान बढ़ायी है, उनकी सम्पत्ति से वे मोटे हो रहे हैं और अपनो प्रतिज्ञा को कायम रखने के लिये दोनों लड़ चुके हैं। तब इटली के फासिस्टों ने इंग्लैंड और जर्मनी का ही पथ ग्रहण करने का निश्चय किया।

मुसोलिनी

जब इटली का नेतृत्व मुसोलिनी के हाथ में आ गया, तब उसकी दृष्टि दक्षिणावर्ती अबीसीनिया पर पड़ी। अबीसीनिया को उसने एक अच्छे शिकार के रूप में देखा। मुसोलिनी इटली के धनिक वर्ग का एक कठपुतली मात्र है। लेकिन वह एक वीर योद्धा है और जनता उसपर बहुत कुछ विश्वास रखती है। इसी कारण फासिस्टों ने अपनी स्वार्थ-पूर्ति के लिये उसको नेता बनाया। इटली का नेतृत्व अपने हाथ में आने के बाद मुसोलिनी

ने अबीसीनिया पर आक्रमण करके उसको अपने कब्जे में रखने की बात जनता को भली भाँति समझाया। उसने जनता को इस बात के भ्रम में डाल दिया कि जब तक हम अबीसीनिया जैसे असभ्य देश को जीतकर उसपर शासन नहीं करेंगे, तब तक अपने वीर पूर्वजों की शान को कायम नहीं रखेंगे और जब तक अबीसीनिया की संपत्ति का उपभोग नहीं करेंगे तब तक देश की गरीबी नहीं मिट सकती। इसलिये हर एक इटैलियन परिवार का कर्तव्य है कि वह लड़ाई में अपने नौजवानों को भेजे अर्थात् सेना में भर्ती करे और उसका खर्च चलाने के लिये धन की सहायता दे।

अबीसीनिया पर आक्रमण

इटली में गरीब घराने के नौजवान ही अपनी जीविका की लालच से सेना में भर्ती होते हैं। आज मुसोलिनी ने बेचारी अबीसीनिया को हड़पकर अपने फासिज्म का पूरा परिचय संसार को दिया है और अपने राष्ट्र को मजबूत बना लिया है। इस अबीसीनियन युद्ध में लाखों इटैलियन सैनिकों का रक्तपात हुआ और जनता का अपार द्रव्य उसमें खर्च हुआ है। लेकिन उससे इटली की जनता का कौन सा फायदा हुआ। कहने की आवश्यकता नहीं कि, यह लड़ाई इटली के (धनी) शासक वर्ग के ही लाभ के लिये हुई है। सभ्यता का पाठ पढ़ाने के बहाने आज अबीसीनियन जनता सब तरह से चूसी और दबायी जाती है; लेकिन इटैलियन गरीब वर्ग इस लूट की संपत्ति को भोगने से बिलकुल वंचित रखा जाता है।

चौथा अध्याय

फैसिज्म का साथी नात्सिज्म



फैसिज्म का प्रचार

इटली ने जिस शासन-प्रणाली को अपनाया वह इंग्लैंड, जर्मनी और जापान इत्यादि पूँजीपति साम्राज्यों का एक अनुकृत रूप मात्र है। यह कहना अनुचित न होगा कि, इटली, जर्मनी, इंग्लैंड और जापान में फैसिस्ट शासन स्थापित हुआ है, अर्थात् ये सब राष्ट्र फैसिस्ट हैं। फासिज्म सामाजिक दमन पर कायम हुआ है। पूँजीवाद और साम्राज्यवाद से जो सामाजिक विषमता अर्थात् गरीबी और बेकारी फैली हुई है, उसका शिकार इटली, जापान, जर्मनी इत्यादि राष्ट्र भी हुए हैं। लेकिन उन देशों का शासनाधिकार एक धनी वर्ग के हाथ में है जो अपनी गुटबन्दी की नीति को अख्तियार किये हुए है। किसान मजदूर इत्यादि निम्न श्रेणी की जनता में क्रान्ति की आग तो धधक रही है, लेकिन उस आग को दमन के बल से बुझाने की कोशिश की जा रही है। इसलिये वहाँ अभी तक कोई गैर सरकारी आन्दोलन प्रबल रूप में उठ खड़ा नहीं हुआ है। इसके अतिरिक्त देश-प्रेम के नाम पर शासक-वर्ग भोली भाली जनता को उभाड़ भी रहा है।

नात्सिज्म

हम बता चुके हैं कि, इंग्लैंड इत्यादि सभी पूँजीपति या साम्राज्यवादी राष्ट्रों में फैसिज्म कायम हुआ है। इनमें जर्मनी में जो फैसिज्म कायम हुआ है उसका दूसरा नाम नात्सिज्म या राष्ट्रीय साम्यवाद है। इसमें साम्यवाद शब्द एक धोखे की टट्टी मात्र है; क्योंकि जर्मनी में उतनी बेकारी फैली हुई है जितनी कि अन्य किसी भी देश में और वह प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही है। वहाँ के शासक इस अमीरी और गरीबी के भेद को कायम रखने के लिये अपना शोषण बनाये रखना चाहते हैं। नात्सिज्म और फैसिज्म में कोई भेद नहीं, केवल यही फर्क है कि नात्सिज्म का स्थापक हिटलर और फैसिज्म का मुसोलिनी है।

फैसिज्म और नात्सिज्म का परिहार

संसार के शिक्षित लोगों को पता है कि, फैसिज्म और नात्सिज्म पूँजीवाद का ही परिणाम है और उनसे उत्पन्न हुई सामाजिक विषमता को हटाने के लिये समाजवाद ही एक मात्र उपाय है। हिटलर और मुसोलिनी दोनों यह जानते हैं कि संसार के दलित देशों में जो क्रान्ति हो रही है, वह इसी बात के आधार पर है। इसलिये मुसोलिनी कहता है कि, फैसिज्म पूँजीवाद का दास नहीं है; बल्कि पूँजीवाद की एक मात्र दवा है। हिटलर ने भी इसीलिये अपने दल का नाम नाजी अर्थात् राष्ट्रीय साम्यवाद रखा है। हिटलर और मुसोलिनी दोनों संसार को खासकर अपनी

जनता को यह बताया करते हैं कि, हमारे वाद को कोई पूँजी-वाद या साम्राज्यवाद नहीं कह सकता। दुनिया की गरीबी और बेकारी को हल करने का दावा जैसे समाजवाद रखता है वैसे हम भी एक उपाय पेश कर रहे हैं।

साम्राज्यवादी लड़ाई और फैसिज्म

समाजवादी लोग श्रेणी-युद्ध के द्वारा पूँजीवाद का अन्त करना चाहते हैं। वे जानते हैं कि, राष्ट्रों की आपस की लड़ाई से केवल पूँजीपतियों का ही फायदा हो सकता है। इसके विपरीत जनता को युद्ध से नुकसान भी पहुँचेगा। लेकिन हिटलर और मुसोलिनी जनता के कल्याण का नाम मुँह से जपते हुए भी साम्राज्यवादी युद्धों के परमभक्त हैं। वे ऐसी लड़ाई से अपने स्वार्थ की पूर्ति करने की कोशिश में दिन-रात लगे रहते हैं और ऐसी लड़ाई को मनुष्य जाति के लिये परमोपयोगी और उत्तम साधन मानते हैं। मुसोलिनी और हिटलर के लिये अपने देश वालों का ही स्वार्थ सर्वोपरि है। एक समय मुसोलिनी जर्मनी के नात्सिज्म का बड़ा प्रोत्साहन करता था और नात्सिज्म को फैसिज्म का ही संस्करण मानता था। लेकिन जब नात्सिज्म जर्मनी में प्रबल हुआ और जाति तथा भाषा की एकता के नाते जब जर्मनी ने आस्ट्रिया को हड़पना चाहा तो मुसोलिनी भौंहें सिकोड़ने लगा। बेचारी अबीसीनिया को हड़प लेने के बाद मुसोलिनी यह समझ गया कि, फैसिज्म के पाशविक अत्याचार को पूछने-

वाले राष्ट्र संसार में मौजूद हैं और इसलिये हिटलर से किसी प्रकार का वैमनस्य रखना आपत्तिजनक है। इसी कारण मुसोलिनी हिटलर से हाथ मिलाकर मुल्कों को खा जाने की ताक में मुँह खोलकर संसार के सामने खड़ा है। इन दो मानव राक्षसों की यह नवीन मैत्री कृत्रिम है; क्योंकि वे अपने अपने स्वार्थ की पूर्ति करने के लिये ही एक दूसरे का साथ देना चाहते हैं। दोनों ही विश्व शान्ति के नाम पर विश्वक्रान्ति अर्थात् राष्ट्रों को आपस में लड़ाकर करोड़ों मनुष्यों का खून बहाना चाहते हैं। हिटलर ने एक पुस्तक में लिखा है कि "असल बात तो यही है कि विश्व-शान्ति का आदर्श उसी दिन सबसे उत्तम प्रकार से संसार में प्रचारित हो जायगा, जब कि दुनियाँ के शासन की बागडोर एक ही स्वामी के हाथ में आ जायगी। एक दूसरी जगह यह भी लिखा है कि, हर एक राष्ट्र को अपनी चमकदार और तेज तलवार को खूब अच्छी तरह ढालने की कोशिश करनी चाहिये।

फैसिज्म और नात्सिज्म

अभी तक जो कुछ कहा गया है, उससे यह स्पष्ट हुआ होगा कि, फैसिज्म और नात्सिज्म में कोई भेद नहीं है। यदि कुछ भेद है, तो वह यही है जो इटली और जर्मनी में है। इटली एक कृषि-प्रधान देश है और जर्मनी कल-कारखाना-प्रधान। कल-कारखानों की उन्नति, वहाँ उतनी नहीं हुई है, जितनी कि अन्य पूँजीवादी देशों में हो चुकी है। इसके विपरीत जर्मनी एक उद्योग-

प्रधान देश है। कल-कारखानों के आधिक्य और पूँजीपतियों के स्वार्थपूर्ण शोषण के कारण वहाँ की गरीबी और बेकारी ने अब भयंकर रूप धारण किया है। श्रेणी-संघर्ष और विश्वक्रान्ति की आग तथा समाजवाद के हौवे से भयभीत होकर वहाँ के पूँजीपतियों ने नात्सिज्म स्थापित करने के लिये हिटलर के सामने अपनी थैली खोल दी है और उसी तरह इटली में फैसिज्म कायम करने के लिये वहाँ के जमीन्दारों ने भी अपनी लूट का बोरा मुसोलिनी के सामने खोल रखा है। इटली ने फैसिस्ट राज्य की सृष्टि किसानों की जगती चिता के ऊपर और जर्मनी ने नासिस्ट लोक की रचना मजदूरों की सूखी हड्डियों के ऊपर की है। जापान तथा इंगलैंड भी इन्हीं दोनों के अनुयायी हैं। इनमें सबसे पहले इंगलैंड और जर्मनी ने इस फैसिज्म का रास्ता खोल रखा था।

सम्मिलित मोर्चा

फैसिज्म को देखकर संसार के सारे शोषित वर्गों ने आँखें खोल ली हैं। संसार के मजदूरों ने फैसिज्म का मजा चखा है संसार के शिक्षित लोग भी यह जान गये हैं कि, तन्त्रवादी फैसिस्ट पूँजीपतियों के पिट्ठू हैं और वह क्रान्तिकारी नहीं हैं; बल्कि प्रतिक्रियावादी (Reactionary) हैं। वे संसार के चक्र को पीछे घुमाकर समाज को बर्बरता की ओर ले जाते हैं। फैसिज्म को जड़ से उखाड़ कर फेंक देने के लिये संसार के शोषित वर्गों ने एक प्रबल सम्मिलित मोर्चा (United front) तैयार किया है।

पाँचवाँ अध्याय

फैसिज्म की तानाशाही



जनवर्गवादी शासन

फ्रान्स, अमेरिका, इंगलैंड, जर्मनी इत्यादि देशों में पार्लियामेंटरी या वर्गवादी शासन केवल नाम मात्र के लिये है। वहाँ के शासन की बागडोर धनिकों के हाथ में है जो जनता को अशिक्षित रखकर और राष्ट्रीयता के भ्रम में डालकर अपनी हुकूमत कायम रखते हैं। वहाँ के मजदूर और किसान खूब चूसे जाते हैं और जनता प्रतिदिन गरीब होती जाती है। इस समय उनमें जागृति पैदा होने लगी है। एक समय जल्दी आनेवाला है जब कि जनता शासकों के ढोंग को समझ जायगी। जब फैसिस्ट शासक देखते हैं कि, जनता जाग कर उठ खड़ा होना चाहती है तब वे अपने हाथ में नंगी तलवारें लेकर क्रान्तिकारियों को कुचलने लगते हैं।

पूँजीवाद की मृत्यु चेष्टा

आज भारत, चीन जैसे गुलाम देशों में श्रेणी-संघर्ष द्वारा साम्राज्यवाद का अन्त किया जाने लगा है। इसलिये पूँजीवाद लुढ़कने जा रहा है। इस विपत्ति से बचने के लिये उसने आज

फैसिज्म की दवा खायी है। लेकिन जब फैसिस्ट देशों की जनता भली भाँति जागेगी और संसार की अन्य जनता के साथ मिलकर लड़ने लगेगी, तब तो साम्राज्यवाद या (पूँजीवाद) फैसिज्म को मृत्यु-शैय्या की शरण लेनी पड़ेगी।

बाजारों के लिये चिल्लाहट

लेकिन फैसिस्ट वाले इस समय अपनी धुन में मस्त हैं। सभी देशों के भीतर उत्पादन की शक्तियों पर पूँजीपतियों का कब्जा हो जाने के कारण जनता की गरीबी और बेकारी बढ़ गयी है और बाजार पर्याप्त रूप में न मिलने के कारण पूँजीपति लोग उपनिवेशों के लिये चिल्ला रहे हैं जहाँ से उनको कच्चा माल मिल सके और जहाँ अपने कारखानों में बनी हुई चीजें काफी मुनाफे में बिक सकें। इसीलिये हिटलर चिल्ला रहा है कि, हमें बाजारों की अर्थात् साम्राज्यों (उपनिवेशों) की आवश्यकता है। मुसोलिनी भी ऐसा चाहता है और अबीसीनिया को कमजोर पाकर अब हड़प बैठा है। चीन भी अब जापान के पंजे में जा रहा है। इसलिये फैसिज्म का मुख्य उद्देश्य है साम्राज्य स्थापित करना। आज सभी फैसिस्ट राष्ट्रों में तोप टैंक, मशीनगन, हवाई जहाज, बम और जहरीली गैसें बनाने में ही जनता का धन खर्च किया जा रहा है। इस काम की दौड़ में वे एक दूसरे को मात कर रहे हैं। उन देशों के जितने ही लोग हथियार उठाने की ताकत रखते हैं, उन सबको सरकारी नियमानुसार सैनिक-शिक्षा ग्रहण कर सेना में भर्ती होना पड़ता है।

गोली से क्रान्ति का दमन

फैसिस्टों की यह तानाशाही अधिक दिन तक नहीं चलेगी। गरीब और बेकार जनता जब भूख से चिल्लाने लगती है और क्रान्ति करना चाहती है तब फैसिस्ट वाले गोलियों की बौछार से उसका अन्त करना चाहते हैं। जनता पसीना बहाकर जो पैसा कमाती है, वह थोड़े से पूँजीपतियों, जमीदारों और फैसिस्ट अफसरों के हाथ तथा लड़ाई के खर्च में चला जाता है।

कालेजों से निकले हुए विद्यार्थी युवकों को खेतों में बेगार काम करना पड़ता है। यह सब राष्ट्र के नाम पर है मगर सारी कमाई पूँजीपतियों के हाथ चली जाती है। लेकिन फैसिस्ट देशों के युवक, किसान, मजदूर और आम जनता अब यह समझने लगी है कि, हमारी रक्षा फैसिज्म के नाश से ही हो सकती है। वहाँ अब जो कम्यूनिस्ट पार्टियाँ स्थापित हो चुकी हैं, वे जोरों के साथ क्रान्ति की लहरें बहाने की कोशिश कर रही हैं। हिटलर और मुसोलिनी दोनों समझ गये हैं कि, उनकी हुकूमत खतरे में है और दुनियाँ किस ओर जा रही है। लेकिन उनको अब भी आशा है कि जब कि दुनियाँ के सभी शोषणवाले—पूँजीपति—धनी वर्ग उनके साथ हैं, क्रान्ति की यह लहर शायद रुक जाय। स्पेन के गृह-युद्ध और जापान की शक्ति के प्रदर्शन से उनकी नाड़ियों में नया रक्त चलने लगा है।

सोवियट रूस का सामना

सोवियट रूस जिसकी जनता ने क्रान्ति कर समाजवादी

शासन अपने मुल्क में कायम किया है। संसार के सभी दलित, पीड़ित, शोषित और गुलाम देशों में श्रेणीयुद्ध पैदा कर अर्थात् विश्व-क्रान्ति पैदा कर पूँजीवाद, फैसिज्म या साम्राज्यवाद को मिट्टी में मिलाना चाहता है और संसार में समाजवादी शासन कायम करके जनता के जीवन को सुखी और उन्नतशील बनाना चाहता है। इसके लिये वह उन देशों की जी जान से सहायता करने को तैयार है। संसार के शोषित मुल्कों ने भी आपस की ऐक्यता की आवश्यकता को पहचान लिया है। ऐसी हालत में हिटलर तथा मुसोलिनी आदि फैसिस्ट शासक रूस का गला घोंटना चाहते हैं। इसके लिये वे संसार में गैर समाजवादी आन्दोलन चलाकर राष्ट्रों को रूस के खिलाफ लड़ाना चाहते हैं। लेकिन उनकी यह आशा मृत्युशय्या पर पड़े हुए रोगी के जीने की आशा है।

छठाँ अध्याय

फैसिज्म और नारी जाति

फैसिस्ट देशों में सभी प्रकार के प्रगतिशील विचारों को रोकने की कोशिश की जा रही है। जिस प्रकार वे जनता के आन्दोलनों को शोषित वर्गों की क्रान्ति को खतम करना फैसिस्ट लोग बहुत जरूरी समझते हैं, उसी प्रकार नारी जागृति के भाव जनता में उठने से वे रोकते हैं। संसार में स्त्री जाति का स्थान अति प्राचीन काल से ही गिरा हुआ है। हमारे भारतवर्ष में ही उसकी कैसी दुर्दशा है—पुरुष जाति के स्वार्थपूर्ण उपयोग का किस प्रकार वह साधन बन गयी है और अपने नैसर्गिक अधिकारों से वह कितनी वंचित है—यह समाज के किसी भी हितैषी से छिपा नहीं है। भारत में स्त्री जाति की हालत आज जितनी शोचनीय है, उतनी ही पाश्चात्य नारीवर्ग की स्थिति करीब एक अर्धशताब्दी पहले तक गिरी हुई थी। पोप से लेकर ईसाई धर्म के सभी पुरोहितों ने और समाज-सुधारकों ने स्त्री को पापिनी और निर्जीव कहकर उसकी उपेक्षा की है और स्त्रियों को बहुत नीचा स्थान समाज में दिया है। इसी कारण यूरोप में पिछली शताब्दी से नारी-आन्दोलन जोरों

से हो रहा है। यह महिला-आन्दोलन देखकर हिटलर और मुसोलिनी आजकल डर गये हैं; क्योंकि उनका खयाल है कि जब नारी-जाति अपने अधिकारों को वापस ले लेगी, तब समाज को अपनी उन्नत-अवस्था में पहुँचने में सहायता मिलेगी समाज की उन्नत अवस्था ही समाजवाद है। उसके पूर्व फैसिज्म को अपनी कब्र में जाकर बैठना पड़ेगा। असल में बात भी वही है, जब स्त्री जाति खुद आजाद हो जायगी तब वह समाज या संसार में किसी की गुलामी—शोषण—दमन—दलन या खेद-जनक बात देख नहीं सकेगी। उसको दूर करने की शक्ति भी स्त्री-वर्ग में नैसर्गिक रूप से छिपी हुई है; लेकिन जब तक आजाद न होगी तब तक वह अपनी इस शक्ति का सदुपयोग नहीं कर सकेगी। लेकिन फैसिस्ट शासक सब तरह से संसार की प्रगति को रोकर उसको बर्बरता की ओर ले जाना चाहते हैं।

महिला-आन्दोलन पर रोक

जर्मनी, इटली और जापान में महिला-आन्दोलन को भरसक सरकारी कानून से रोकने की कोशिश हो रही है वहाँ महिलाओं के नैसर्गिक, पारिवारिक, सामाजिक और नैतिक अधिकार छीने जा रहे हैं। धनी और विलासी शासक-वर्ग उनको अपने जूते के नीचे ही रखना चाहता है। वह अपने शोषण के बल से सुख भोग के साथ जिन्दगी गुजर करना ही परम ध्येय मानता है। उसके लिये सभी फैसिस्ट देशों के शासक लोग स्त्रियों को विला-

सिता की सुन्दर सामग्री समझते हैं और श्रमजीवियों के रक्त की तरह युवतियों के यौवन-रस को भी वे अपने महल में पड़े-पड़े चूसना चाहते हैं, जब महिलाएँ पुरुषों के समान स्वतन्त्र होकर बाहर काम करने जावेंगी, तब वे उनकी विलासिता के रंगमंच में नाचनेवाली पुतली नहीं रह जावेंगी। वह तभी संभव है जब स्त्रियाँ घर के भीतर ही पड़ी रहें। इस कारण फैसिस्ट देशों में नारी-वर्ग के ऊपर दमन के ऐसे कानून लादे गये हैं जिससे वे पुरुषों के समान शिक्षा नहीं पा सकतीं, नौकरी नहीं कर सकतीं और अपने अधिकारों को हासिल नहीं कर सकतीं। पति की सेवा और बाल-बच्चों का पालन-पोषण करना ही स्त्रियों का कर्तव्य बताया जा रहा है। विद्यार्थिनियों को घरेलू धन्धों के सिखाने के अतिरिक्त कोई उच्च शिक्षा नहीं दी जाती। जो शिक्षा लड़कियों को दी जाती है, उसमें यही समझाया जा रहा है कि, घर के बाहर जाने से नारी-जीवन की हानि हो जाती है। स्त्री घर की लक्ष्मी है और पति चाहे कैसा भी हो देवता मानकर उसकी सेवा करना ही पत्नी का एक मात्र कर्तव्य है। फैसिस्ट-शासन-विधान के अनुसार पत्नी पति के, पुत्री पिता के और बहन भाई के विरुद्ध कोई कार्रवाई नहीं कर सकती और जो स्त्रियाँ इस विधान के बाहर जाने लगती हैं अर्थात् पुरुष के खिलाफ हाथ उठाना चाहती हैं उनको कड़ी अदालती सजा भोगनी पड़ती है। स्त्रियों की गुलामी हालत को कायम रखने के उद्देश्य से जर्मनी में हिटलर ने जो कानून पास किया है, उसका नाम उसने

सुधारवादी रखा है। उसका कहना यह है कि जब स्त्री घर के बाहर काम करने जाती हैं, तब पारिवारिक वैषम्य उत्पन्न होता है इसलिये महिलाओं को कोई नौकरी नहीं करनी चाहिये। हिटलर की हुकूमत के पहले जर्मन सरकारी ओहदों पर औरतें भी रखी गयी थीं; लेकिन अपना शासन आरंभ करते ही उसने स्त्रियों को अपने काम से अलग कर दिया।

सातवाँ अध्याय

फैसिज़्म और धर्म (Religion)

हम दूसरे अध्याय में कह चुके हैं कि, धर्म के संचालक पुरोहित वर्ग अभी तक राज-वर्ग या शासकों के हाथ में रहे हैं। ये दोनों वर्ग साधारण जनता की कमाई को चूसकर अपना प्रभुत्व कायम रखते हैं। आम जनता के ऊपर जैसे राजा महाराजा तथा शासन करनेवाले अन्य लोग अपना अधिकार जमाते हैं। वैसे ही पुरोहित वर्ग भी परलोक और ईश्वर के नाम पर अपने शासन का अंकुश जनता के ऊपर लटकाता है। ईश्वर-भजन, पुण्य और दान के नाम पर न जाने कितना धन समाज से यह वर्ग चूसा करता है। चाहे आप किसी भी धर्म या संप्रदाय को लीजिये, पुरोहित लोग प्रजा के ऊपर शासन करनेवाले शासकों का ही साथ देते हैं। धर्म और सम्प्रदाय के आडंबर और उसकी बातें केवल ढोंग मात्र हैं जिस बहाने जनता का शोषण और दमन होता है।

धार्मिक विषमता का अन्त

आजकल जैसे पूँजीवाद, जमींदारी तथा साम्राज्यशाही मिट्टी में मिलने जा रही है, वैसे धर्म (Religion) भी अपने

कब्र में घुसने जा रहा है। अभी जनता यह समझने लगी है कि, धर्म या ईश्वर हमें स्वर्ग में पहुँचानेवाली कोई चीज नहीं है, बल्कि हमारे ऊपर हुकूमत और हमारा शोषण करने का शासकों का एक हथियार मात्र है। जनता के सामने इस समय सवाल रोटी का है। रोटी का सवाल तभी हल होगा, जब कि सारे संसार में समाजवादी शासन कायम होगा। समाजवादी राज्य (Socialist state) में सारी संपत्ति और हुकूमतें सारे समाज के हाथ में आ जायँगी अर्थात् वह व्यक्ति विशेष के हाथ न बँट जायगी। मौजूदा साम्राज्यशाही शासन को जड़ से उखाड़ कर फेंक दिये बिना समाजवादी शासन कायम नहीं हो सकता। यह जनता के संगठन के बाद ही हो सकेगा। जनता जब संगठित होकर पूँजीवाद जमीन्दारी तथा साम्राज्यशाही के खिलाफ लड़ेगी तब समाज की काया पलट जायगी और सारी संपत्ति और सारी शक्तियाँ जनता अर्थात् समाज के हाथ आ जायँगी।

धर्म और शासक वर्ग

धर्म जनता के इस संगठन के रास्ते पर रुकावट डालता है। दुनियाँ के किसी भी देश को लीजिये वहाँ की जनता कई धर्मों संप्रदायों या मजहबों में विभक्त है। एक मजहब, धर्म या संप्रदायवाले दूसरों को अपना विरोधी समझकर उनसे लड़ते रहते हैं। समाज की आरंभिक अवस्था से लेकर अभी तक हर एक मजहब के संचालक लोग राजकीय शासन के इशारे पर चलने

वाले ही हुए हैं या राजा या शासकों की बातों पर चलनेवाले हुए हैं। दोनों ही वर्गवाले मिलकर जनता को अपने स्वार्थ के लिये दबाते और उसपर हुकूमत करते तथा बहकाते आये हैं। दोनों की गुटबन्दी अति प्राचीन काल से ही चली आयी है। इन दोनों वर्गों में एक दूसरे के ही बल पर खड़ा रहता है। अतः जनता पर हुकूमत करनेवाले धनी लोग मजहब या धर्म को बनाये रखना चाहते हैं। पूँजीवादी और साम्राज्यशाही सरकार मजहबों को बनाये रखकर उनको मजबूत करना अपना बल समझती हैं; क्योंकि सरकार को यह भय हमेशा रहता है कि, जनता अपनी धार्मिक विभिन्नताएँ हटाकर और एक सूत में बँध-कर अपने अधिकारों के लिये सरकार वर्ग से कहीं लड़ न जाय? जमींदार, पूँजीपति तथा पुरोहित वर्ग साम्राज्यशाही संसार के पैर हैं। इन वर्गों का अस्तित्व मिट जाने पर सरकारें का भी सर्वनाश हो जाता है। इसलिये सरकार और उसके सहा-यक वर्ग यह चाहते हैं कि, धर्म बना रहे और जनता कई मज-हबों में बँटकर आपस में लड़ती रहे, जिससे कि उसमें संगठन न होने पावे। जब किसी देश की हालत यह हो जाती है, तब वहाँ की जनता का संगठन होना असंभव हो जाता है और शासकों का स्वार्थ पूरा हो जाता है।

धर्म की आड़ में फैसिज्म की अनीति

फैसिज्म जब कि पूँजीवाद या साम्राज्यशाही का अन्तिम रूप

है, तब धर्म को अपना एक मजबूत हथियार समझता है। फैसिस्ट और जनतन्त्रवादी शासक यह चाहते हैं कि, जनता में संगठन न होने पावे। क्योंकि जब जनता संगठित होगी तब देश में क्रांति मचेगी और शोषित वर्ग फैसिस्ट तानाशाही को समूल नाश कर वर्गवादी शासन या समाजवादी शासन कायम करेंगे। इसलिये वे जनता को धर्म और ईश्वर के नाम पर बहकाते हैं। इतना ही नहीं, वे पुरानी अन्धतापूर्ण प्रथाओं को—प्रवृत्तियों को—आचार व्यवहारों को कायम भी रखना चाहते हैं और जनता पर इस बात का दबाव डालते हैं कि वह उस पुराने रास्ते पर चले। शिक्षा भी इसी उद्देश्य के अनुकूल दी जाती है। हिटलर और मुसोलिनी की तानाशाही आरंभ होते ही जो लोग इस सनातन मार्ग का विरोध करना चाहते हैं, वे कड़ी सरकारी सजा के पात्र बन रहे हैं। जापान, इटली, जर्मनी इत्यादि देशों में सारी पैशाचिक प्रवृत्तियाँ राष्ट्रीय (समाजवाद) वाद, देश-भक्ति, ईश्वर और धर्म की दुहाई पर चलती हैं। धर्म और ईश्वर के नाम पर वहाँ करोड़ों रुपया उड़ाया जा रहा है।

फासियो ने पुरोहितों के हाथ को भी मजबूत बनाया है। पुरोहित वर्ग भी उसके बदले फैसिस्ट सरकार के प्रति श्रद्धा तथा झूठे राष्ट्रीयवाद का विश्वास जनता के मन में पैदा करते हैं।

आठवाँ अध्याय

फैसिज्म और जातीयता



अनार्यों का इटली से निर्वासन

फैसिज्म अपने सामने केवल संकुचित राष्ट्रीयवाद तथा प्रतिक्रियावादी प्रवृत्तियों को ही नहीं रखता ; बल्कि जातीयता भी उसका एक मुख्य अंग है। मुसोलिनी कहता है कि केवल शुद्ध आर्य वर्ग ही इटली में रह सकता है। वह केवल इटैलियन जाति को शुद्ध आर्यों की संतान मानता है। वह इटली में रहने वाली काली जाति को और आसपास के जुगोस्लाव जैसे वर्गों को मिटा कर अपने देश को जाति-संकट से बचाना चाहता है। इसलिये मुसोलिनी बाहर से किसी भी जाति को इटली में आकर बसने नहीं देता।

जनसंख्या की वृद्धि और विवाह

मुसोलिनी इटैलियन जन-संख्या को भी बढ़ाना चाहता है। उसके लिये वहाँ विवाह करनेवालों को धन-सहायता दी जाती है।

हिटलर का जातीय पक्षपात

मुसोलिनी की भाँति हिटलर भी जर्मनी में शुद्ध जर्मन जाति

को ही रखना चाहता है। वह शुद्ध जर्मन जाति को ही आर्य मानता है। मुसोलिनी की तरह हिटलर ने भी अपने देश की जन-संख्या बढ़ाना एक मुख्य काम समझ रखा है। उसके लिये सरकार की ओर से विवाह करने वाले युवक-युवतियों को आर्थिक सहायता देने का प्रबन्ध कर रखा है। हिटलर का सिद्धान्त है कि, जर्मनी शुद्ध आर्यों का ही देश है और उसके लिये माता-पिता की कई पीढ़ियों तक अन्य जातियों का रक्त-सम्मिश्रण न होना बहुत जरूरी है; इसलिये जर्मनी वाले अन्य देश या जाति से वैवाहिक संबन्ध रख नहीं सकते। कई शताब्दियों से यहूदी लोग जर्मनी में रहते हैं। वे वेषभूषा सभ्यता तथा संस्कृति में जर्मन जाति से भिन्नता नहीं रखते। परन्तु हिटलर ने उनको भी देश से निकालने की व्यवस्था करके अपने शासन की कठोरता का परिचय दिया है। हिटलर की हुकूमत के पहले सरकारी ओहदों पर यहूदी लोग भी रखे गये थे। जर्मन शासन की बागडोर अपने हाथ में पाते ही उन लोगों को अपने काम से हाथ धोना पड़ा।

जातीयता का ढोंग क्यों ?

जब कि दुनिया में क्रांति की ज्वाला धधक रही है फैसिस्ट अपने कुशासन को कायम रखने में बड़ी कठिनाई देखते हैं, तब अपने शासन की जड़ को मजबूत रखने के लिये उनको कई तिकड़मों का प्रयोग करना पड़ता है। उन तिकड़मों में मुख्य राष्ट्रीय (समाजवाद) वाद, ईश्वरवाद और जातीयता है। जब अन्य

देशों की जनता उन्नति की ओर बढ़ती जा रही है ; हिटलर और मुसोलिनी अपनी जनता की प्रगति को केवल रोकना नहीं चाहते बल्कि वे उसको पीछे लौटाने की कोशिश भी कर रहे हैं। वहाँ के साहित्य, कला तथा वैज्ञानिक आविष्कारों से भी इसी उद्देश्य की पूर्ति हो रही है। संक्षेप में हम कह सकते हैं कि, फैसिज्म प्रतिक्रिया (प्रतिवर्तन) वादी शक्तियों (Reactionary forces) का केन्द्रीभूत शासन है।

—

नवाँ अध्याय

फैसिज्म का अन्त और समाजवाद

शासक और शासित राष्ट्र

ऊपर के अध्यायों से पाठकों को इस बात का पता चला होगा कि यह संसार या मानव-समाज कहाँ और किन-किन दशाओं को पार करते हुए आगे बढ़ रहा है तथा उसकी वर्तमान स्थिति कैसी है ! अब हमें देखना है कि वह किधर जाना चाहता है ।

जिस प्रकार हम मानव-समाज को दो श्रेणियों में अर्थात् शोषक या शासक और शोषित या शासित वर्ग में विभक्त कर सकते हैं, उसी प्रकार दुनियाँ के मुल्कों को भी हम दो भागों में बाँट सकते हैं । उनमें एक तो वे राष्ट्र हैं जो दूसरे कमजोर मुल्कों को अपने कब्जे में रखे हुए हैं और उनपर निर्दय शासन करते हुए उनकी सारी संपत्ति को चूस ले रहे हैं । ऐसे राष्ट्रों का नाम है साम्राज्यवादी या फैसिस्ट । दूसरे, वे कमजोर मुल्क हैं, जो इन साम्राज्यवादियों के शोषण और दमन का शिकार बने हुए हैं और जहाँ की जनता में अधिकांश भूखी बेकार और उन्नति के साधनों से हीन है । दुनियाँ के सारे कम-

जोर मुल्क इन लुटेरे साम्राज्यवादी शासकों के हाथ बँट गये हैं। जो देश अभी पूरे इनका गुलाम नहीं बने, उन पर ये अपना दाँत गड़ा रहे हैं। इस काम में वे एक दूसरे को अपना शत्रु समझ रहे हैं। इसी दुश्मनी के भाव का परिणाम गत विश्व महा समर हुआ। इस समय भी वे एक भावी लड़ाई की तैया-रियाँ कर रहे हैं।

श्रेणी-संघर्ष और समाजवाद

लेकिन जनता चाहे गुलाम देश की या साम्राज्यवादी राष्ट्र की हो प्रतिदिन गरीब होती जा रही है। और वह यह समझने लगी है कि, उस गरीबी और बेकारी का एक कारण जमींदारों, पूँजीपतियों और सरकार का शोषण है। इसलिये सभी देशों की शोषित जनता संगठित होकर शोषकों के अस्तित्व को मिटाना चाहती है और शासन अपने हाथ में लेना चाहती है। आज जो मुल्क दबाये गये हैं, या चूसे जा रहे हैं, वहाँ की जनता में श्रेणी-संघर्ष पैदा हो गया है। भारत, स्पेन, चीन इत्यादि मुल्कों में क्रान्ति जल रही है। इंगलैंड, जर्मनी, जापान, इटली, अमेरिका इत्यादि फैसिस्ट देशों में भी यद्यपि राष्ट्रीयवाद तथा देशभक्ति का झूठा पाठ पढ़ाया जा रहा है तथापि वहाँ की जनता में क्रांति का भाव पैदा हो गया है। वह भी श्रेणी-संघर्ष का रूप धारण कर रहा है। थोड़े ही दिनों के बाद सारे संसार में श्रेणी-संघर्ष द्वारा विश्व-क्रान्ति मचेगी। इस क्रान्ति की आग में पूँजीवाद या

फैसिज्म जल कर राख हो जायगा और समाजवादी शासन कायम होगा।

जब सारे संसार में समाजवादी राज्य (Socialist State) कायम होगा, तब गरीब-अमीर, शासक-शासित, शोषक-शोषित सुखी-दुखी इत्यादि का भेद या किसी तरह की विषमता नहीं रहेगी। क्योंकि उस समय समाज की सारी संपत्तियाँ तथा हुकूमतें जनता के हाथ आ जायँगीं। सब को यथाशक्ति काम मिलेगा और जीवन की सारी सामग्रियाँ और उन्नति के सारे साधन सबको समाज की ओर से दिया जायगा। सबको समान रूप से जीने का अधिकार रहेगा। कोई किसी से दबाया नहीं जायगा।

समाजवाद का आविष्कार

समाज की इस दशा का आविष्कार वैज्ञानिक रूप में पहले पहल यूरोप में महर्षि कार्ल मार्क्स ने किया था। उनका सिद्धान्त द्वन्दमान भौतिकवाद इसी बात का समर्थन करता है कि, संसार में समाजवादी अवस्था आने वाली है। संसार उसी अवस्था की ओर बढ़ रहा है। रूस इस बात का उदाहरण सबसे पहले रख रहा है। यद्यपि वहाँ अभी पूर्ण रूप से समाजवादी शासन कायम नहीं हुआ है तथापि वह उसी पूर्णावस्था की ओर बढ़ रहा है तथा अन्य देशों को भी उस ओर ले जाना चाहता है।

समाज की उन्नत अवस्था समाजवाद

जब हम मानव-समाज की विकासावस्था पर दृष्टि डालते हैं,

तब हमें ऐसा प्रतीत होता है कि, यद्यपि समाज अभी तक आगे बढ़ता जा रहा है तथापि वह अपनी अवस्था पर नहीं पहुँचा है। क्योंकि हम समाज की उसी अवस्था को उन्नत कहेंगे, जिसमें कोई सामाजिक विषमता नहीं रहेगी। समाज अपनी गुलामी प्रथा की अवस्था को और उसके बाद सामंतशाही की अवस्था को पार कर रहा है। सामाजिक-विषमता शुरू से बढ़ती २ अभी अब अपनी सीमा तक पहुँच गयी है। यह सामाजिक विषमता तभी मिटेगी, जब संसार में समाजवादी शासन कायम होगा। उसी अवस्था को हम समाज की उन्नत अवस्था कह सकते हैं।

97210

दसवाँ अध्याय

फैसिज्म और क्रान्ति

क्रान्ति और दमन

कहने की आवश्यकता नहीं कि, फैसिस्ट देशों में भी अन्य गुलाम मुल्कों के समान क्रान्ति की आग इस समय जलने लगी है। वहाँ के किसान, मजदूर तथा अन्य शोषित वर्ग पूँजीपतियों, जमींदारों तथा फैसिस्ट सरकार से लड़ने के लिये तैयार हो रहे हैं। लेकिन कई प्रकार से उसको दबावे की कोशिशें भी हो रही हैं। आन्दोलन करना या विद्रोह करना वहाँ गैरकानूनी है। क्रान्तिकारी लोगों को बड़ी-बड़ी सजाएँ दी जाती हैं। सरकार या शासकों के विरुद्ध कोई सभा करना उन देशों में मना है। फैसिस्टों के अन्यायपूर्ण शासन के विरोध में कोई चूँ तक नहीं कर सकता। लेकिन जनता जितनी ही दबायी जाती है उतनी ही उसके भीतर क्रान्ति की आग जलती जाती है।

दमन के अन्याय

जर्मनी का शासन अपने हाथ में लेने के पहले हिटलर ने वादा किया था कि, उसकी हुकूमत में लोगों को पूरा-पूरा अधिकार मिलेगा। शासन की बागडोर हाथ में आते ही, उसने

जर्मनी की सभी पार्टियों का खात्मा कर दिया और सभी मजदूर संघों को हथिया लिया। इन अन्यायों के खिलाफ अगर कोई बोलता है, तो उसकी जबान खींच ली जाती है। जो लोग उसके सामने (हिटलर से) अपने अधिकारों को पेश करने जाते हैं, वे कैंप जेलों में ठूँस दिये जाते हैं। जो रोटियाँ माँग रहे हैं उनपर गोलियाँ चलाई जा रही हैं। बहुत से क्रान्तिकारी बन्द कोठरियों में डाल दिये गये हैं। हड़ताल करना किसी के लिये भी गैरकानूनी है। हिटलर ने सभी कम्यूनिस्ट, समाजवादी और जनतंत्रवादी पार्टियों को निकाल कर बाहर कर दिया। जर्मनी में आजकल समाजवादियों और यहूदियों की संपत्ति छीन ली जाती है।

ग्यारहवाँ अध्याय



उपसंहार

ऊपर के अध्यायों से यह स्पष्ट हुआ होगा कि, फैसिज्म एक तरह के गुण्डाशाही शासन का नाम है। यह गुण्डाशाही शासन आज खतरे में है। लेकिन फैसिस्ट लोगों का विश्वास यही है कि, संसार में उन्हीं की जीत होगी। मुसोलिनी यह बात चारों ओर फैला रहा है कि, सारा यूरोप फैसिस्ट हो जायगा। उसका कहना है कि हर एक पाश्चात्य देश में संगठित प्रभुत्व, गणतंत्र शासन (Organised authoritarian national democray) स्थापित हो जायगा।

अपनी साम्राज्यवादी प्यास को मिटाने के लिये सभी फैसिस्ट देशों ने पूर्वीय यूरोप के छोटे २ स्वतंत्र देशों तथा सोवियट रूस पर आक्रमण करने के लिये एक सम्मिलित मोर्चा तैयार किया है। इस मोर्चे का सामना करने के लिये फ्रान्स, सोवियट रूस तथा अन्य आजादी चाहने वाले छोटे २ देशों ने मिलकर एक दूसरा सम्मिलित मोर्चा तैयार किया है। इस कारण फैसिस्ट तानाशाही ही खतरे में है। इसी कारण इस समय जर्मनी सोवियट रूस पर आक्रमण करने से डरता है। इसके अतिरिक्त फैसिस्ट देशों की जनता भी आज अपने शासकों के जुल्म का

खात्मा करने के लिये तैयार हो रही है। जर्मनी, पोलैंड, आस्ट्रिया इत्यादि देशों में समाजवादी और कम्यूनिस्ट पार्टियों का एक जाल सा बिछ गया है। श्रेणी-संघर्ष और विश्व-क्रान्ति की आग भीतर से जल रही है जो समय पड़ने पर बाहर उभड़ पड़ेगी और फैसिस्ट शासन का महल उसमें जलकर खाक हो जायगा।
